ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor (RJIF): 8.4
IJAR 2024; 10(11): 27-31
www.allresearchjournal.com
Received: 01-08-2024
Accepted: 05-09-2024

दिनेश कुमावत
शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
पंडित दीनदयाल उपाध्याय
शेखावाटी विश्वविद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

राजेंद्र सिंह
प्रोफेसर, राजकीय
महाविद्यालय, उदयपुरवाटी,
राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
दिनेश कुमावत
शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
पंडित दीनदयाल उपाध्याय
शेखावाटी विश्वविद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

मणि मधुकर के 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में अकाल विभीषिका

दिनेश कुमावत, राजेंद्र सिंह

सारांश
मरुजीवन के कुशल चितेरे मणि मधुकर का नाम हिन्दी साहित्य के अधुनातन बहुचर्चित हस्ताक्षरों में से हैं। उनका सम्पूर्ण साहित्य राजस्थान के मरुस्थलीय परिवेश तथा जनजीवन की सशक्त अभिव्यक्ति है। "पत्तों की बिरादरी" उपन्यास में राजस्थान के पश्चिमी एवं सीमावर्ती क्षेत्र में धूल-धूसरित लोगों की छवियों को जीवंतता से उकेरा है। अकाल से पीड़ित उजड़ते-बसते लोगों का सहायतार्थ शिविरों कैंपों में रोटी-पानी की तलाश में जैसे तैसे प्रवेश लेना। पूरे दिन भयंकर गर्मी में उनकी मेहनत के पसीने से फलते-फूलते चंद शक्तिशाली लोगों की अमानवीयता का चित्रण किया है। सहायता कैंपों की आड़ में गरीबो, कमज़ोरों तथा स्त्रियों के शोषण का बड़ी बारीकी से वर्णन किया है। इसी क्रम में सरकारी प्रशासन, राजनेताओं, कथित समाजसेविका आदि पूँजीवादी व्यवस्था के पोषकों द्वारा किए गये शोषण का पर्दाफ़ाश भी किया है। अंत में श्रम शक्ति संगठित होती है और शोषक वर्ग का सशक्त प्रतिरोध करती है। पत्तों की 'बिरादरी' प्रकृतिजन्य सूखे एवं अकाल से बिखर जाती है वहीं दूसरी ओर प्रकृति की ठंडी बोछारों से पुनः जीवन संजीवनी प्राप्त करती है। सम्पूर्ण उपन्यास में प्रकृतिजन्य सूखे का अकाल में रूपांतरण तथा अकाल से जनित समस्याओं जैसे भुखमरी, अनाज का अभाव, पानी की कमी,पलायन तथा अकाल मृत्यु आदि का बड़े ही मार्मिक एवं सूक्ष्म संवेदनात्मक स्तर पर चित्रण किया है। अकाल की भयावहता को पाठकों तक पहुँचाने में यह एक सफल उपन्यास माना जा सकता है।

कुटशब्द: मणि मधुकर, पत्तों की बिरादरी, अकाल विभीषिका, वर्षा, रेगिस्तान, अकाल सहायता शिविर, शोषण, पलायन, विभाजन, भुखमरी

प्रस्तावना
राजस्थान के सुदूर रेगिस्तान में जन्में रचनाकार मणि मधुकर बहु-आयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व के धनी हैं। कवि, कहानीकार,उपन्यासकार, नाट्य-शिल्पी,संपादक और रंगकर्मी के रूप में उनकी न केवल राजस्थान में बल्कि पूरे भारत में उनकी अपनी एक पहचान है। उनका साहित्य लेखन मानव जीवन की चुनौतियों और संघर्षों का एक प्रामाणिक और जीवंत दस्तावेज है। लेखन में निरंतरता,विविधता,और नवीन प्रयोग उनकों साहित्य-जगत में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं। उनके संपूर्ण साहित्य में जीवन के सहज रंगों को बारीकी से देखा और महसूस किया जा सकता है। उनके मित्र और समकालीन रचनाकार डॉ. आलमशाह खान ने उनके बारे में कहते हैं- "सब कुछ होकर भी, वह नहीं कुछ है- वह है मात्र एक निपट आदमी-संवेदनशील आदमी, जो मन से कवि, मस्तिष्क से कथाकार और व्यवहार से नाटककार।"[1]

आलमशाह की यह टिप्पणी मणि-मधुकर के संपूर्ण व्यक्तित्व एवं कृतित्व को भली भाँति संबोधित करती है। राजस्थान के चूरु ज़िले में जन्में मणि मधुकर के औपन्यासिक सृजन का केन्द्र राजस्थान ही रहा है, अब तक उनके चार उपन्यास प्रकाशित हुए हैं जिनमें से "सफेद मेमने, पत्तों की बिरादरी और पिंजरे में पन्ना" तीन उपन्यासों का कथा केन्द्र पश्चिमी राजस्थान का मरू अंचल ही रहा है । 'पत्तों की बिरादरी' (1979) में भी मणि मधुकर ने कथा का केन्द्र बिंदु रेगिस्तान वासियों को ही बनाया है, उपन्यास का शीर्षक चारण कवि अज्जै दान से लिया गया है - "दरख्त एक ढाणी है, एक गाँव है और पत्ते उसके बाशिन्दे होते हैं । साथ बोलते हुए, एक-सा जीवन जीते हुए वे एक ही बिरादरी के अनेक लोग ! लेकिन ऋतुओं की मार से जब पेड़ उजड़ने लगता है तो पत्ते सूख-सूखकर गिरने और बिखरने लगते हैं । अपने गाँव-घर को छोड़- कर, दुःख-दैन्य के बोझ को ढोते हुए, वे पत्ते जाने कहाँ-कहाँ तक रेलों में बहते-उड़ते चले जाते हैं । यही है पत्तों की अपनी बिरादरी ! जब हरे थे, तब साथ । और, अब सूख गये हैं...अपने गाछ, अपनी जड़ों, अपनी शाखाओं से बिछुड़ गये हैं तो भी साथ । यह क्या चीज है जो इनको इस तरह बाँधे हुए रखती है?"[2] यहाँ रचनाकार ने अपनी सृजनात्मक शक्ति से प्रतीकात्मक शैली में अकाल की नैसर्गिक विभीषिका से पीड़ित लोगों का प्रभावी चित्रण किया है।

सन् 1947 में अंग्रेजों ने हिंदुस्तान को दो मुल्कों भारत-पाक में बाँट दिया। इस विभाजन जन्य स्थिति से पूरे देश में सांप्रदायिक एवं जातीय दंगे, आपसी द्वैष, हिंसा-आगजनी जैसी घटनाएं घटित हो रही थी। इसी पृष्ठभूमि में सन् 1961-62 में पाकिस्तान ने भारत पर हमला कर दिया। भारत ने भी हमले का मुंह तोड़ जवाब दिया। कुछ समय बाद ही राजस्थान में अकाल पड़ गया। अकाल जैसी विभीषिका के कारण लोगों को जिन समस्याओं और यातनाओं का सामना करना पड़ा था उनका वास्तविक यथार्थ चित्रण बड़े ही मार्मिक एवं सूक्ष्म संवेदनात्मक स्तर पर रचनाकार ने 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में बखूबी ढंग से किया हैं।

मणि मधुकर ने इस उपन्यास में राजस्थान के मरुस्थलीय प्रदेश और सीमापार के रेगिस्तान में पड़े अकाल के फलस्वरुप वहाँ के जनजीवन पर मंडरा रहे संकटों को प्रस्तुत किया है। किसी भी संवेदनागत स्थितियों के निर्माण में परिस्थितिजन्य कारकों की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अकाल के संदर्भ में इनकी विवेचना करना अति आवश्यक होता है क्योंकि जिम्मेदार कारकों की समझ से ही उसकी मार्मिकता की तीव्रता को समझा जा सकता है। प्रकृति निर्मित अकाल का सीधा संबंध वहां की भौगोलिक एवं जलवायवीय दशाओं से होता है। राजस्थान में अकाल की सर्वाधिक मार इसके पश्चिमी क्षेत्र में पड़ती है जो 'मरुप्रदेश' के नाम से जाना जाता है। वर्षा का अभाव अकाल का सर्वप्रमुख कारण है। यहाँ साल भर में जितना पानी बरसता है उतना पानी देश के अन्य कई हिस्सों में महज़ एक दिन में बरस जाता है। यहाँ से समुद्र की दूरी,मरुस्थल एवं अरावली के बीच की अवस्थिति, अत्यधिक तापमान, न्यूनतम वर्षा, तीव्र सुखी हवाएँ तथा राजस्थान की शुष्क जलवायु आदि कारण अन्य राज्यों की तुलना में राजस्थान में अकाल की आवृति और तीव्रता को बढ़ाते हैं। अकाल का सर्वाधिक दुष्प्रभाव यहाँ की सामाजिक एवं आर्थिक दशाओं पर पड़ता है। जिससे गरीबी, भुखमरी, पलायन, शोषण,अकाल मृत्यु तथा अनेक अमानवीय एवं अनैतिक कृत्यों का जन्म होता हैं।

उपन्यास में बाड़मेर और सीमावर्ती क्षेत्र का चित्रण है। वहां चारों तरफ अकाल की विभीषिका भयानक रूप से फैली हुई है। आम आदमी रोजी-रोटी की आशा में दर दर भटक रहा है। उन्हें खाने के लिए ना रोटी नसीब हो रही है ना ही पीने के लिए पानी। सीमा पर दोनों तरफ के घर पहले से ही बिखर चुके हैं। आसपास के अनगिनत गांव-ढाणियाँ उजड़ कर निर्जन हो चुकी हैं। दो घूँट पानी से हल्क की प्यास बुझाने के लिए चारों तरफ हाहाकार मचा हुआ हैं। चारों तरफ दूर-दूर तक हरियाली नजर नहीं आती, सिर्फ बालू रेत के टीलों के बीच सरकंडे, झाड़-झंझाड़, कंटीली व कांटेदार वनस्पतियां आदि फैली हुई हैं। दूर क्षितिज तक सिर्फ़ रेत के भूरे भूरे टीले ही दिखाई दे रहे हैं। आकाश में सिर्फ सुखी हवा और धूल भरी आंधियां चल रही हैं।

भारत सरकार ने अकाल से प्रभावित लोगों की सहायता के लिए सहायता शिविर (कैम्प) लगाए हैं। जहां अकाल से पीड़ित लोगों को आश्रय मिला हुआ है। सहायता शिविरों में उपलब्ध सीटों से अधिक लोग मजबूरी में रहने को विवश हैं। नए लोगों के लिए पैर रखने की भी जगह नहीं है। शुबो नामक व्यक्ति भी सीमा पार से आम जनता की ही तरह जैसे-तैसे कैंप तक आ पहुँचता हैं। वह देर से ज़रूर आता है लेकिन बछराज की कृपा दृष्टि से उसे 'छतना कैंप' में प्रवेश मिल जाता हैं क्योंकि शुबो बछराज के गाँव उम्मरकोट के पास का फतियाँवाली ढाणी का निवासी है। जब शुबो को कैम्प में बोला जाता है कि तुम पखेत्तानवाले हो ? तो शुबो बड़ी ही दयनीयता से कहता है- "भूखे आदमी का कोई मुलक होता है क्या, जहाँ दो टूक मिलेंगे, चला जायेगा।"[3] शुबो एक आम हिंदुस्तानी है। उसे भारत-पाक का विभाजन मंजूर नहीं है। वह तो सिर्फ अपने

पेट की ज्वाला बुझाना चाहता है। इस भीषण अकाल की काली छाया ने दोनों देशों की विभाजन रेखा तक को मिटा दिया।

अकाल-पीड़ितों का चित्रण करने के लिए लेखक ने प्रमुख रूप से भूख की समस्या को दिखाया है।

भूख मजबूरी में पलायन का कारण बन सकती है और मजबूरी में पलायन भी भूख का कारण बन सकता है। भूख इन्सान को अनेक मजबूरियों और विवशताओं में धकेल देती है। शुबो अकाल जैसी विभीषिका के कारण रोटी और पानी के तलाश में पाकिस्तान से पलायन करके भारत आने को विवश होता है। वह अपनी फतियाँवाली ढाणी से अपने माँ बाप के साथ तो चलता है किंतु कैम्प तक आते आते उसके माँ-बाप दोनों उसका साथ छोड़ देते है। भूखे आदमी का कोई देश नहीं होता है जहाँ दो रोटी मिलेंगी वह वहाँ चला जायेगा। इसी क्रम में शुबो अपने माँ-बाप को साथ लेकर तपती हुई बालू के अनंत विस्तार में रोटी की मंज़िल तक पहुँचने के लिए भारत सरकार द्वारा लगवाये गये सहायता कैम्प की ओर निकल जाता है। यह रास्ता इतना लंबा था कि भूख की वजह से उसकी माँ ने रास्ते में ही धीरे से रेत पर माथा टिका दिया और साँस लोपकर पड़ गई। इसी के साथ शुबो की माँ की आख़िरी इच्छा भी उसके साथ ही माटी हो गई। शुबो अपनी माँ की आख़िरी इच्छा पूरी ना कर सका। "मरने से पहले बस, एक बार ताजा सिंकी हुई रोटी का सुवाद चख लेना चाहती हूँ यही... यही एक आखरी ईच्छ्या रह गयी है अब तो ।"[4] परिस्थितियों के आगे शुबो भी लाचार और बेबस होकर अपनी माँ को आसमान से बरसती हुई आग के हवाले कर देता है और अपने बाऊ को साथ लेकर रोटी की मंज़िल की ओर बढ़ जाता है।

अपने बाऊ को पीठ पर लादकर टीलों की आड़ में रेंगता-रेंगता फ़ौज की चौकियों से बचकर जैसे तैसे सींव तो पार कर लेता है किंतु कैम्प तक पहुँचने में कुछ ही दूरी शेष थी कि प्यास के कारण उसके पिता भी अपने प्राण त्याग देते हैं। बाऊ की जीभ मानो एकदम हलक में चिपक गई हो, कुछ बोल पाने में भी असमर्थ थे, काफ़ी दिनों से पानी नहीं मिला था। "बाऊ हो ! यह मुरचिया की गण्ठी मिल गयी है, देखो ! इसे मुँह में रख लो, आस्ते-आस्ते थोड़ी तो तरावट आयेगी ही ।" उसने बाऊ को हिलाया-डुलाया। वह हड्डियों की बँधी हुई गठरी की तरह औंधे पड़े थे, निश्चल । "बाऊ-हो !"[5] बाऊ अब शुबो को छोड़ गये। शुबो को आज पहली बार एहसास हुआ कि उसके पास कोई नहीं है जो उसकी विवशता को अपनी विवशता में लपेटकर उसे ढाढ़स बँधा सके। "कहीं एक टीले पर उसने अपनी माँ को छोड़ा था, दूसरे टीले पर अब उसने अपने बाऊ को छोड़ दिया... उसी तरह, अंगारे गिराती हुई धूप में।"[6]

"भूख का अंधेरा" नामक रिपोर्ताज में भी मणि मधुकर ने अपनी भाषा के माध्यम से अकाल की भयावह स्थिति में भूख और प्यास से त्रस्त मानव जीवन का सजीव चित्रण किया है। "अचानक बुढ़िया अपनी हथेली फैलाती है और उस पर ढेर सा थूक देती है। उसके थूक का रंग पीला है, नहीं कुछ हरा-हरा सा है। वह हथेली बच्च्वे के मुँह के सामने कर देती है। बच्च्वा रोते-रोते चुप हो गया है और थूक चाटने लगता है।"[7] यहाँ हलक की प्यास से तड़पते बच्चे की यथास्थिति का चित्रण किया है।

सहायता कैंप में रहने वाले लोगों को दिनभर कड़ी धूप में मज़दूरी के पसीने से लतपथ होने के बाद मज़दूरी के बदले अनाज-पानी मिलता था। वहीं दूसरी ओर पुष्पाबाई, ग्यारसीलाल, रावता जैसे पूँजीपतियों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोग ऐशोआराम की सुकून भारी जिंदगी जी रहे हैं। साथ ही आम लोगों का भरपूर शोषण भी कर रहे हैं। मणि मधुकर ने एक जगह भूख को लेकर लिखा है - "दुरभिक्ख! बूंद-बूंद पानी के लिए तरसना और दाने-दाने के लिए बिलखना- भटकना । मनुष्यों और मवेशियों की लाशों के बियाबान में उतरते-डूबते हुए वे दिन और राता मृत्यु और मृत्यु और मृत्यु से भी ज्यादा उसका नंगा भय । इस भय ने शुबो को एकदम निहत्था बना दिया था। वह कुछ नहीं कर सकता था, पल-पल मरते और नष्ट होते जाने के सिवाय। अकाल की डरावनी छायाओं से घिरा हुआ शुबो निरन्तर एक अबूझ जड़ता और कायरता के कीच में धँसता चला गया । उम्मीद उससे बिछुड़ गयी थी । प्राण किसी पिलपिले पैंदे में जा टिके थे।"[8] अकाल की विभीषिका ने अनाज का संकट पैदा कर दिया और 'नाज है तो आज है' की उक्ति को सही साबित कर दिया।

आसपास के सहायता कैंप टूट रहे थे, भूख से बदहाल लोग इधर-उधर भटक रहे हैं। भूख के कारण लोग मर रहे हैं। अपनी भूख को शांत करने के लिए आदमी कुछ भी कर सकता है चाहे वो अनैतिक ही क्यों ना हो। जब तक खाने के लिए अनाज उपलब्ध है तब तक ही आज के जीवन की अपेक्षा की जा सकती है। इसका एक उदाहरण उपन्यास में भी है-कुछ भूखे लोग रात में पुष्पाबाई तथा ग्यारसीलाल को मारकर उनके पास जो खाने की चीजे मौजूद थी उसे लूटते हैं। कैंप टूटने से भूखे लोगों की संख्या बढ़ गयी है। लोगों के झुंड के झुंड के इधर-उधर भटक रहे हैं। भूख से लोग तड़पकर बेहाल हो चुके हैं। "भूख का हवाल यह था कि खेजड़ों-पेड़ों की छाल भी उतार-पीसकर खायी जाने लगी ।

थूहरों के गूदे को इमरत मान लिया गया । पेट भरने के लिए लोग घास-फूस को मसोसकर निगलने लगे।"[9] ऐसी अकाल जनित भूख की दयनीय स्थिति का चित्रण लेखक ने विवेच्च उपन्यास में किया है।

पुष्पाबाई, ग्यारसीलाल, रावता जैसे लोग राजनेताओं के संरक्षण में सरकार के ठेकेदार की तरह काम करते हैं। ये सब सीमापार उम्मरकोट वालों को अकाल-पीड़ितों की सहायता शिविर में आये अनाज को चुराकर बेचते हैं। अनाज बेचने से आये पैसों से ये लोग ऐयाशी करते हैं। अनाज वितरण में अनियमितता, खाद्य अनाज का अवैध भंडारण और बिक्री ने अकाल की पीड़ा को और बढ़ा दिया है। "आस्ते बात करो, आस्ते! ...इस नाज को तो पुसपा बाई ने बेच दिया है, उधर वालों के हाथ। इग्यारसी- लाल की भी इसमें हिस्सेदारी है। सब कैम्पों में यही हो रहा है।"[10]

राजनीतिक संरक्षण की आड़ में अकाल सहायता शिविर भ्रष्टाचार और लूट के अड्डे के रूप में परिवर्तित हो गये हैं। उपन्यास में पुष्पाबाई और उसकी राजनैतिक साँठगाँठ का चित्रण भी किया गया है। "कभी नहीं। कम्फ में ही तो उसके प्रान अटके हुए हैं। दोनों हाथों से बटोर रही है। तुम्हें या किसी को भी, पता नहीं लगने देती वो । "बदरू ने कहा, "जैतपालसिंग की सुपारस और कांगरेस पाल्टी के एक बड़े नेता को तगड़ी घूस देने के बाद यह कम्फ मिला है, पुसपा बाई को । सब जानते हैं, यहाँ के कम्फ सोना उगलते हैं। जब तक अकाल रहेगा, और सरकार की मदद मिलेगी, वह यहीं अड्डा जमायेगी।"[11]

सरकार ने अकाल पीड़ित सहायता शिविरों में रहने वाले लोगों को मज़दूरी के बदले अनाज-पानी की सुविधा मुहैया करवायी। पहले सड़क बनाने का काम करवाया फिर एक पक्के तालाब का निर्माण करवाया जिससे अकाल के समय वर्षा जल का भंडारण किया जा सके और अकाल जैसी स्थिति में उस जल का उपयोग पीने के लिए किया जा सके। "पानी की उन गाँव-ढ़ाणियों में बारहों महीने किल्लत रहती थी । कहीं-कहीं तो आठ-नो बस्तियों के बीच एक ही कुआँ या जोहड़ था । बूंद-बूंद किफायत से बरतकर किसी तरह काम चलाया जाता था। इसलिए, इस बार सरकार ने फैसला किया कि जब तक अकाल है, तल्लाब बनवा डालो लोगों से । बरखा होगी तो सब भर जायेंगे और पानी का संकट मिटेगा । पक्के तल्लाब में दो-ढाई साल तक भी पानी टिक जाता था। पुसपा बाई ने 'इसकीम' पर हाँ भर दी।"[12] यहाँ तालाब के माध्यम से वर्षा जल संपदा संरक्षण का वर्णन है वही पुष्पाबाई जैसे शक्तिशाली लोगों को पैसा लूटने का एक और अवसर मिल जाता है।

भारत सरकार ने अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए कैंप लगाये हैं। उनमें जो शक्तिशाली लोग हैं वे स्त्रियाँ का शारीरिक शोषण करते हैं। अकाल का सबसे बुरा और सर्वाधिक दुष्प्रभाव स्त्रियों पर ही पड़ता है। सुवटी शुबो से कहती है - "काम-धाम की किसको परवा है ? जिसके साथ जवान लुगाई हो, ग्यारसीलाल उसी को इस कम्फ में रखता है... तुम अक्केले हो। तुमको खामखाँ क्यों टिक्कड डालेगा वो? उसको क्या फायदा?"[13] ग्यारसीलाल जैसे शक्तिसंपन्न लोग कैम्पों में स्त्रियों को अपने साथ शारीरिक सम्बन्ध रखने के लिए मजबूर किया करते हैं। अकाल के कारण स्त्रियों को रोज़ी रोटी के लिए अन्याय-अत्याचार, बलात्कार आदि अमानवीय अकृत्यों को मजबूरी में सहना पड़ता है। । मणि मधुकर की 'फरिश्ते' कहानी में भी सीमा पर पाकिस्तानी लोग अकाल सहायता के नाम पर अबोध गिन्नी और उसकी माँ का शारीरिक शोषण करते हैं- "इस तरह के फ़रिश्ते कभी कभी हमारे घर आते थे और माँ कुछ देर के लिए उनके साथ चली जाती थी।"[14]

रेगिस्तान में मूलभूत सुविधाओं का हमेशा से ही अभाव रहा है। अकाल जैसी भयावह स्थिति में स्वास्थ्य का संकट और अधिक गहरा जाता है। यहाँ खाने को अनाज है और पीने को पानी ही नहीं है तो स्वास्थ्य सेवाओं की बात तो बहुत दूर है । कैंप में पीलिया ने बछराज की जान ले ली। "बीमारी इस बीच एक अजीब किस्म की बेम्मारी फैल गयी । बदन में थरथरी होती थी, ताप चढ़ता था, गला रुकता था और फिर पलापल में आदमी खत्तम । चींटी-भुनगों की तरह लोग मरने लगे। टीबों पर लाशें नजर आने लगीं । कौन उठाये, कौन जलाये-दफनाये ? चील-कौवों की बन आयी थी । गिद्ध चोंचें लड़ाते रहते थे । सियारों की हुआँ-हुआँ जमराज की पुकार लगती थी।"[15]

इस पूरे उपन्यास में एक बात सोचनीय है कि सूखे से प्रभावित क्षेत्रों में मूलभूत वस्तुओं की पर्याप्त व्यवस्था और बेहतर क्रियान्वयन के अभाव में सूखा पहले अकाल में परिवर्तित होता है फिर अकाल की विभीषिका का चरम रूप देखने को मिलता है। मुनाफ़े का लालच और भ्रष्टाचार जैसी प्रवृतियाँ भी अकाल जैसी संकट को और अधिक भयावह बना देते हैं। पुष्पाबाई, ग्यारसीलाल, रावता जैसे कुछ लोग प्रकृतिजन्य सूखे को भीषण मानवजनित अकाल में रूपांतरित कर देते हैं।

वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ के महीने बीतने को हैं लेकिन वर्षा अभी तक नहीं हुई। कैंप में अनाज भी ख़त्म होने को है। ग्यारसीलाल और रावता जैसे लोग कैंप से लोगों को खदेड़ने लगे हैं क्योंकि अब कैंप के टूटने की चिंता इन लोगों को भी खाने लगी है। "इस बार भी बरखा नहीं हुई तो दुरभिक्ख खा जाएगा हम लोगों

को।"[16] वर्षा ना होने की चिंता फिर से अकाल जैसी भयानक त्रासदी को आँखों के सामने ला देती है।

"अचानक तड़-तड़-छप छप की आवाजों ने उनको घेर लिया। सीधी बौछारें गिर रही थीं । लोग खुशी से पागल हो उठे, "इन्दर की सवारी आ गयी !...अब कम्फ टूटने की परवा नहीं, इन्दर मेहरबान हो गया है।"[17] वर्षा के अभाव के कारण ही अकाल की नैसर्गिक स्थिति बनी हुई थी लेकिन जैसे ही वर्षा हुई वैसे ही लोगों की आशाएँ-अपेक्षायें फिर से सिंचित होने लगी। "रात जागती आँखों सपने देखते हुए निकल गयी। उनके सामने अपने खेतों के चेहरे लहरा रहे थे। यह पानी उन चेहरों पर हरापन ले आयेगा। वह हरापन बस्ती-ढ़ाणियों में जिनगी के खूंटे गहरे गहरे गाड़ देगा । वे खूंटे घर-दुआरों को उनकी खोयी हुई हैसियत पाने में मदत करेंगे !"[18] वर्षा की कुछ बूँदों ने ही अकाल पीड़ितों को थोड़ी राहत भारी सांस प्रदान की।

"ठट्ठ के ठट्ठ लोग, जो रोजी-रोटी की तलाश में बिखरे हुए थे, अब गाँव-टपरों की तरफ दौड़-दौड़े चले जा रहे थे । ...वही मैदान। वही रास्ते। वही रेत। वही पेड़ । और पत्ते, नये होने के लिए अपनी बिरादरी में लौट रहे थे।"[19] अकाल ने जिन पत्तों को अपनी बिरादरी से अलग किया था उन पत्तों ने प्रतिकूल परिस्थितियों में अपनी जीवटता,मानवीय धैर्य, संघर्ष और सामर्थ्य का परिचय दिया। पानी जो उनको जोड़ता है जीवन में हरियाली लाता है। पानी है तो आपसी रिश्ते क़ायम हैं पानी नहीं तो उनके हलक की प्यास उनको खूंखार और क्रूर प्रवृति का बना सकती है। वर्षा के आगमन से ही उनके जीवन का एक सुंदर राग उनके सामने दिखायी पड़ता है। वर्षा का आगमन उनके लिए खाने के लिए अनाज, पीने के पानी, पशुओं के लिए चारा,चारों तरफ़ हरियाली आदि का भी आगमन है। बारिश उनकी ख़ुशियों का प्रतीक है,उनकी समस्त इच्छाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति का माध्यम भी। वर्षा ही उनके सबसे बड़े भय "दुरभिक्ख खा जाएगा" से मुक्ति का प्रतीक भी है । बरसात ही उन्हें अपनी बिरादरी में पुनः लौटने का नया अवसर भी प्रदान करती है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः रूप से हम कह सकते हैं कि "पत्तों की बिरादरी" नामक उपन्यास रेगिस्तान के सामाजिक जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास हैं। इसमें अकाल और सूखे से पीड़ित रोटी-पानी की आशा में भटकते-फिरते विवश लोगों की दर्द भरी दास्तां हैं। शुबो जैसे लोग रोटी को मंज़िल मानकर गैरमूलक में भी पलायन करने को मजबूर हैं। अकाल एक वंचनापरक समस्या है जो अपने साथ भुखमरी, पानी की कमी, खाद्य अनाज की अनुपलब्धता, बेजुबान पशुओं के लिए भी जीवन का संकट आदि समस्याओं को आमंत्रित करता हैं। प्रकृति जन्य सूखा प्रभावी सरकारी नीतियों के अभाव में, शोषण और भ्रष्टाचार जैसी अनैतिकता के सहारे भीषण मानवजनित अकाल का रूप धारण कर लेता है जो वहां के लोगों के सामने अकाल मृत्यु का द्वार खोल देता है। लेखक ने उपन्यास का नाम प्रतीकात्मक ढंग से प्रयोग किया है। पत्तों की बिरादरी अकाल जैसी नैसर्गिक विभीषिका के कारण बिखर जाती है तथा वर्षा के माध्यम से बिखरी हुई बिरादरी को नया जीवन प्राप्त होता है।

संदर्भ परिचय

1. मधुमती (पत्रिका), फरवरी, अंक 1982, पृ. 19
2. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 25
3. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 12
4. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 14
5. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 18
6. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 19
7. सूखे सरोवर का भूगोल, पृष्ठ संख्या- 39
8. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 49
9. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 139
10. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 40
11. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 84
12. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 60
13. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 22
14. चुनिंदा चौदह, पृष्ठ संख्या- 13
15. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 139
16. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 128
17. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 160
18. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 160
19. पत्तों की बिरादरी, पृष्ठ संख्या- 161